फणीश्वरनाथ रेणु : संभवंति युगे-युगे...

शिवमूर्ति
संपर्क : 9450178673

रेणु के साहित्य से परिचित हुआ तो लगा ख़ज़ाना मिल गया।

लिखने का कीड़ा बारह-तेरह वर्ष की उम्र में कुलबुलाने लगा था। वह दौर 'कहानी', 'नई कहानियां' 'कहानीकार', 'सारिका' एवं 'धर्मयुग' जैसी पत्रिकाओं का था, जिसमें छपने वाली लगभग सभी कहानियां शहरी मध्यवर्गीय जीवन की होती थीं। उस जीवन से मैं सर्वथा अपरिचित था। जिस गँवई जीवन से मैं परिचित था, उसकी कहानियां नहीं मिलती थीं। यह तो जब प्रेमचंद के साहित्य से परिचित हुआ तब जाना कि हमारे दु:ख और अभाव की दुनिया, खेती-किसानी, गाय-गोरू भी कहानी के विषय हो सकते हैं। फिर जल्दी ही रेणु से परिचित हुआ तो इस जीवन को प्रस्तुत करने की अधुनातन शैली और सलीके से भी परिचित हुआ।

आप जितने लोगों को पढ़ते हैं, उतनी तरह के लेखन-कौशल से परिचित होते हैं। 'जैक लण्डन' को पढ़ा तो जाना कि 'सूक्ष्म निरीक्षण' लेखन में कैसा कमाल करता है। वे एक नवजात पिल्ले का अपने आस-पास की सर्वथा अपरिचित दुनिया को जानने-समझने और उससे तादात्म्य बिठाने का ऐसा वर्णन करते हैं कि उस पिल्ले को वाणी मिल जाय तो वह खुद भी ऐसा चाक्षुष वर्णन न कर सके।

शेक्सपियर को पढ़ा तो जाना कि संक्षिप्तता का गुण कैसे एक विस्तृत घटनाक्रम को पूरी नाटकीयता के साथ सत्तर-पचहत्तर पेज में समाहित कर सकता है। शेक्सपियर का एक संवाद बीसों साल से मन को आह्लादित करता आ रहा है। 'आथेलो' नाटक में डेस्डेमोना आथेलो के साथ गायब हो जाती है। डेस्डेमोना के पिता का एक परिचित उसे यह सूचना देते हुए कहता है कि जितनी जल्दी हो सके अपनी बेटी को उस मूर के चंगुल से छुड़ा लाओ वरना वह बदमाश तुम्हें नाना बना कर छोड़ेगा।

गोर्की को पढ़ा तो पता चला कि भावनाएं कैसे समर्थ शब्दों में बंधकर पारदर्शी और चमकदार हो उठती हैं। 'वे तीन' उपन्यास में किशोर इल्या अपनी किशोरी मित्र वेरा के साथ एकांत में खड़ा है। गोर्की लिखते हैं- वेरा की सुन्दरता को एकटक हक्का-बक्का खड़ा इल्या ऐसे देख रहा था जैसे शहद से भरी नाद को कोई भालू देखता है।

ये उन लेखकों के उदाहरण हैं, जिन्होंने अपने शब्द सामर्थ्य से अपने भाव संसार को 'व्यक्त' करके उसे उत्कर्ष तक पहुंचाया लेकिन रेणु ऐसे लेखक हैं, जिनके द्वारा 'अव्यक्त' छोड़ा गया भाव संसार 'व्यक्त' से भी ज्यादा मुखर होकर पाठक को चमत्कृत करता है। रेणु के पास वह कौशल है कि वे बिंदु मात्र प्रेम के एहसास को विस्तारित करके पाठक को समुद्र संतरण का सुख दे दें। बिंदु को समुद्र बना दें और समुद्र की तरह पूरी जिंदगी को आप्लावित किए प्रेम को एक बिंदु में अँटा दें।

पहली कोटि का उदाहरण 'मैला आंचल' से- कालीचरन और मंगला के बीच आकर्षण की जो डोर है उसे कायदे से प्रेम भी कैसे कहें। वे दोनों भी दावा नहीं कर सकते कि उन्हें प्रेम हो गया है। ज़बान से कभी कहा भी नहीं। न एक दूसरे से, न अपने आप से। उंगली भी नहीं छुई एक दूसरे की। कालीचरन अपने पहलवान गुरु के आदेश का पालन करते हुए सदैव औरत से पांच हाथ दूर ही रहा, एक अपवाद के अलावा, जब मंगला बीमार पड़ी। लेखक भी इस 'राग' को शब्द नहीं देता। 'अव्यक्त' छोड़ देता है। लेकिन राग अनुराग की यह कथा लंबी यात्रा करती है और सारे पाठक जान जाते हैं कि दोनों के बीच अगाध प्रेम पैदा हो चुका है। वे पृष्ठ-दर-पृष्ठ इस प्रेम-सागर में संतरण करते हैं और चाहते हैं कि यह यात्रा कभी खत्म न हो।

रेणु की इस सिद्धि का दूसरा उदाहरण उनकी कहानी 'रसप्रिया' है। मिरदंगिया और रमपतिया की दुखांतिकी। जब रमपतिया बारहवें वर्ष में प्रवेश कर रही थी तो दोनों के बीच आकर्षण का जादू पैदा हुआ जो आठ वर्ष तक परवान चढ़ता रहा। फिर जो बिछुड़े तो पंद्रह वर्ष के लंबे अंतराल के बाद मिले। मिले भी कहाँ? मिलते-मिलते रह गए। मिलना ही नहीं चाहा। कतरा कर निकल गए। ऐसा नहीं कि उनके बीच का प्रेम समाप्त हो गया। यह तो उनकी सांसों में बसा था। पर उन्हें बोलना नहीं आता था। रेणु ने तेइस साल लंबी इस प्रेमकथा को चंद पंक्तियों में समाहित कर दिया। उक्त दोनों प्रसंग गूंगे प्रेम के आख्यान हैं। इनके पात्रों को बोलना नहीं आता। रेणु ही हैं जो इस 'अव्यक्त' को 'व्यक्त' करने का सामर्थ्य रखते हैं।

यद्यपि रेणु के बचपन में जमीदारों और रजवाड़ों का सामाजिक और राजनीतिक जीवन में बहुत दख़ल था पर रेणु ने आमजनों, तलछट के स्त्री-पुरुषों को अपनी रचनाओं का मुख्य पात्र बनाया। रेणु की दुनिया 'लाल पान की बेगम' की बिरजू की माँ, 'आजाद परिंदे' के हरबोलवा और सुदर्शन, 'रसप्रिया' की रमपतिया, मोहना और मिरदंगिया, 'पंचलैट' की मुनरी और गोधना, 'एक आदिम रात्रि की महक' के करमा, 'नैना जोगिन' की रतनी, 'संवदिया' के हरगोविन, 'मैला आँचल' के बावनदास और बालदेव और 'परती परिकथा' के लुत्तो और मलारी जैसे पात्रों से आबाद होती है।

रेणु भरसक पात्रों की जाति बताने से बचते हैं। वे प्रायः ऐसे पात्रों का सृजन करते हैं, जो एक समान सामाजिक हैसियत वाले बड़े समूह का प्रतिनिधित्व कर सकें।

'परती परिकथा' एक अलग पायदान की रचना है, जिसमें ऐसी स्थितियों या पात्रों का सृजन किया गया है जिनसे प्रगतिशील मूल्यों को स्थापित करने की लेखक की आकांक्षा का पता चलता है। जैसे पीताम्बर झा द्वारा अपना तख़ल्लुस 'मकबूल' रखना, सवर्ण लड़के सुवंश का दलित लड़की मलारी से विवाह करना या जित्तन और ताजमनी का लिव-इन रिलेशन में रहना। बीसवीं सदी के मध्य में जब यह उपन्यास लिखा गया, उस समय गाँव की पृष्ठभूमि में ऐसे कथानक शामिल करना प्रगतिशील दृष्टि का ही परिचायक है।

माधुर्य का जो गुण बिहार की बोलियों में है, वही रेणु के गद्य में भी है। रेणु माधुर्य के लेखक हैं। इसे 'कोमलकांत पदावली' की श्रेणी में भी रख सकते हैं। एकाध अपवाद छोड़ कर वे मारपीट, शोषण, दमन, कत्ल, फौज़दारी या गरीबी का चित्रण करने से बचे हैं। अपवाद के रूप में संथालों के साथ हुए संघर्ष को रख सकते हैं लेकिन इस संघर्ष में भी गाँव की सभी जातियाँ एक तरफ और संथाल दूसरी तरफ हैं। इन बूढ़ी, बच्ची संथालिनों के साथ पाट के खेत में दिनदहाड़े जो सामूहिक बलात्कार होता है, उसके बारे में रेणु इतना ही कहते हैं कि संथालिनें दोहरे दर्द से कराह रही हैं। निःसंदेह उतना ही कहकर वे बहुतों से ज्यादा कह जाते हैं पर लगता है कि कुछ और कहा जाता तो ज्यादा संतोष मिलता। यह भी सोचता हूँ कि एक ही गाँव में बसने वाली विभिन्न ऊँची नीची कही जाने वाली जातियों के बीच व्याप्त छल-छद्म, शोषण और संघर्ष का चित्रण रेणु करते तो कैसे करते?

बिहार के अन्य लेखकों की कहानियों में सत्तर के दशक से ही गाँव में सुलगते जाति संघर्ष की झलक मिलने लगी थी। इन्हीं तनावों के परिणाम स्वरूप रेणु के बचपन में ही त्रिवेणी संघ का गठन हुआ था। इससे स्पष्ट होता है कि जातीय संघर्ष की आग बिहार के गाँवों में बहुत पहले से मौजूद थी लेकिन इसकी मुखर अभिव्यक्ति रेणु के साहित्य में नहीं मिलती। शायद इसका कारण यह हो कि इतने तलछट में उतरना रेणु की प्रकृति में न रहा हो।

भाषा के संकट पर रेणु द्वारा सुनायी गयी एक घटना के बारे में कहीं पढ़ा था। बिहार में साधुओं का एक ऐसा संप्रदाय है जो बातचीत में हिंसक शब्दों- काटना-मारना, खून-खराबा आदि का प्रयोग नहीं करते। वे तरकारी को 'काटते' नहीं, अमनिया करते हैं। 'खून' को 'रंगरस' कहते हैं। एक बार उस संप्रदाय के गुरुजी अपने चेलों के साथ कहीं जा रहे थे तो रास्ते में डाकुओं ने लूट लिया और गुरुजी को चाकू मार दिया। चेले मदद के लिए बगल के गाँव में गए तो भाषा का संकट उपस्थित हो गया। 'गुरुजी को काट दिया' या 'गुरुजी खून से लथपथ हैं', ऐसा कह नहीं सकते थे। उन्होंने कहा- डाकू गुरुजी को 'अमनिया' कर दिए। गुरुजी 'रंगरस' से सराबोर हैं। ग्रामीणों को पूरी बात समझने में समय लग गया। तब तक गुरुजी के प्राण निकल गए।

रेणु खुद भी संत लेखक थे। काटने-मारने या खून-खराबे का वर्णन करना उन्हें अच्छा नहीं लगता होगा। वास्तव में रेणु प्रेम, प्यार, अनुराग और आसक्ति के लेखक हैं। इन्हीं आवेगों से उनका अंतःकरण संतृप्त रहता होगा। यही उनकी प्रकृत लीला भूमि है।

संक्षिप्तता (Brevity) के साथ सुस्पष्टता (Vividness) का जो क्रॉफ्ट रेणु ने विकसित किया, वह न रेणु के पहले किसी हिंदी रचनाकार में मिलता है, न उनके बाद के। अन्य भाषाओं के बारे में मैं नहीं जानता। इसलिए मैं कहता हूं कि रेणु जैसे रचनाकार कभी-कभी पैदा होते हैं- संभवंति युगे युगे...

मुझे कभी-कभी दु:ख होता है कि रेणु यहां क्यों पैदा हुए? किसी पश्चिमी देश में पैदा होते तो उन्हें उनका पूरा प्राप्य मिलता। पूरे विश्व साहित्य में सूर्य की तरह चमकते।

(**परिचय :** शिवमूर्ति प्रेमचंद एवं रेणु की परंपरा के चर्चित कथाकार हैं, वर्तमान में लखनऊ, उ. प्र. में रहते हैं।)